ISSN - 2230 - 9578

# Journal of Research and Development

A Multidisciplinary International Level Refereed Journal

COSMOS IMPACT FACTOR
4.270

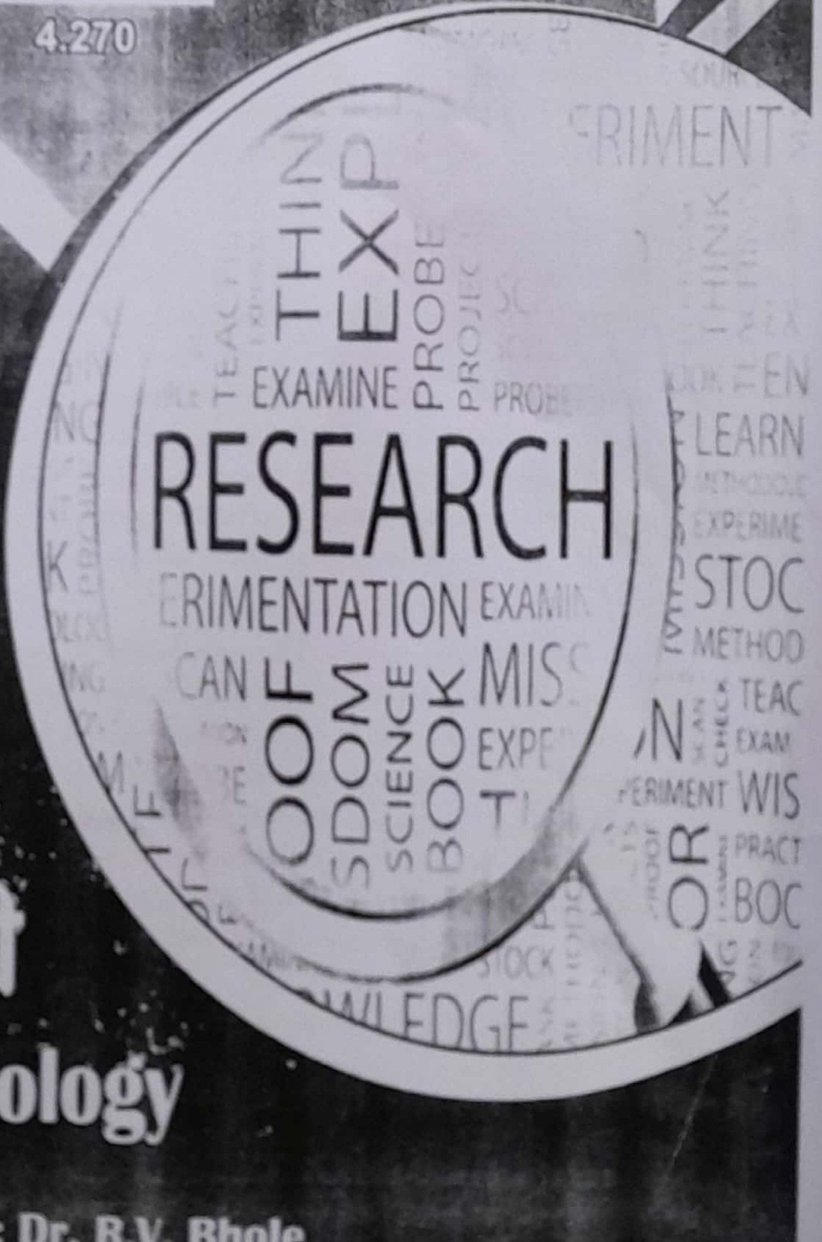


२६ जानेवारी २०२०

भारतीय प्रजासत्ताक दिनानिमित्त...

# संशोधन पद्धती
# Research Methodology

Editor : Dr. R.V. Bhole
Ravichandram, Survey No-101/1, Plot No-23, Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102

Scanned with CamScanner

**Journal of Research & Development** Vol. 10 (Special Issue 4) January 2020, (ISSN-2230-9578)
COSMOS IMPACT FACTOR - 4.270

# अनुसन्धान में निदर्शन पद्धति के गुण एवं दोष

प्रा. एम.जी. बसावे (हिन्दी विभाग)
विद्या विकास मंडळाचे कला व वाणिज्य महाविद्यालय, अक्कलकुवा जि. नंदुरबार

- **प्रस्तावना -**

अनुसन्धान एक व्यापक शब्द है। अनुसन्धान वैज्ञानिक विषयों का भी होता है और साहित्यिक विषयों का भी किन्तु दोनों की पद्धति और स्वरूप में विशेष अन्तर है। अन्तर यदि है तो विषय की आवश्यकताओं और प्रयोग पद्धतियों का। दोनों में ही सूक्ष्म और सोद्देश्य निरीक्षण के साथ परीक्षण और प्रयोग के पश्चात गम्भीर विवेचन रहता है, जिसमें विपक्षीय घटनाओं, उदाहरणों और विचार बिन्दुओं का उतनाही स्वागतपूर्ण विवेचन होता है जितना कि सपक्षिय घटनाओं, उदाहरणों तथा विचार बिन्दुओं का। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक अनुसंधान की भाँति साहित्यिक अनुसन्धान में नवार्जित ज्ञान को पूर्वार्जित ज्ञान के आलोक में व्याख्या करके संगति बैठाई जाती है। विषय चाहे जो कुछ हो उसके विवेचन में निष्पक्ष वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग उसको स्वरूपता प्रदान कर उसके नाम को सार्थक करता है। अनुसन्धान चाहे जिस प्रकार का हो हमारे ज्ञान में अभिवृद्धी करता है। यह ज्ञान सुसम्बद्ध और हमारे पूर्वार्जित ज्ञान पर आधारित होता है। जहाँ आधारित नहीं होता है वह पूर्वार्जित ज्ञान को भी संशोधनीय और परिमार्जनीय प्रमाणित कर देता है। अनुसन्धान कार्य मुख्यतः दो पद्धतियों के आधार पर किया जा सकता है। ये दो पद्धतियाँ जनगणना पद्धति और निदर्शन पद्धति हैं। जनगणना पद्धति द्वारा अध्ययन विषय की समस्त इकाइयों का अध्ययन किया जाता है और उन्हीं के आधार पर निष्कर्ष निकाला जाता है। निदर्शन पद्धति के अन्तर्गत सभी इकाइयों का अध्ययन न कर समग्र में से कुछ ऐसी इकाइयों को चुना जाता है जो समस्त इकाइयों का भली-भाँति प्रतिनिधित्व करती हैं। इससे अनुसन्धानकर्ता अपना ध्यान समग्र में व्यर्थ न गँवाकर कुछ पर ही केन्द्रित करता है जिससे अध्ययन विषय का गहन अध्ययन, समय और धन की बचत होती है। इसीलिए निदर्शन पद्धती अनुसन्धान में महत्वपूर्ण मानी जाती है। अनुसन्धान में निदर्शन पद्धति के कुछ गुण और दोष भी होते हैं। इस अनुसार निदर्शन पद्धति की परिभाषाएं तथा उनके गुण और दोषों का विस्तृत विवेचन किया है।

**निदर्शन की परिभाषाएँ** - निदर्शन का पारिभाषिक विवेचन विविध प्रकार से किया गया है। गुडे तथा हाट्ट के अनुसार, "एक निदर्शन जैसा कि नाम से स्पष्ट है, एक विस्तृत समूह का अपेक्षाकृत छोटा प्रतिनिधी है।" श्रीमती यंग के अनुसार, "एक सांख्यिकी निदर्शन उस सम्पूर्ण समूह अथवा योग का एक अति लघु चित्र है जिसमें से कि निदर्शन लिया गहा है।" बोगार्डस के अनुसार, "निदर्शन एक पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार इकाइयों के एक समूह में से एक निश्चित प्रतिशत का चुनाव है ।" फ्रँक याटन की दृष्टि में, "निदर्शन शब्द का प्रयोग केवल किसी समग्र चीज की इकाइयो के एक सेट या भाग के लिए किया जाना चाहिए जिसे इस विश्वास के साथ चुना गया है किं वह समग्र का प्रतिनिधित्व करेगा।" मिल्ड्रेड पार्टन के मतानुसार, "एक निश्चित संख्या में व्यक्तियों, मामलों या निरीक्षणों, को एक समग्र विशेष में से निकालने की प्रक्रिया या पद्धती अथवा अध्यायन के हेतु एक समग्र समूहं में से एक भाग को चुनना निदर्शन-पद्धति कहलाती है।"

- **निदर्शन के आधार -**

**१) समग्र की एकरूपता** - यदि समग्र की विभिन्न इकाइयों में अधिक भिन्नताएँ नहीं हैं तो जिन इकाइयो को चुना जाएगा वे प्रतिनिधिपूर्ण होगी। थोडी बहुत भिन्नता तो मिलेगी, परन्तु साधारणतः यदि उनमें एकरुपता मिलेगी तो चयनित इकाइयो के आधार पर निकाला गया परिणाम विश्वसनीय एवं लाभदाय होगा। भौतिक वस्तुओ में जो समानता पाई जाती है वह मानवीय जगत में नहीं पाई जाती। इसका कारण यह है कि भौतिक वस्तुओं की उत्पादन प्रणाली में समानता दृष्टिगोचर होती है। परन्तु सामाजिक घटनाओं, मानव प्रवृत्तियों, आदतों और स्वभाव में समानता न होने के कारण निदर्शन का चुनाव मुश्किल हो जाता है। स्टीफेन के अनुसार, 'जीवन के प्रत्येक पक्ष में विविधता होने से एक को अलग करना कठिन होता है। इस प्रकार के स्पष्ट विभाजनो के प्रभाव के कारण निदर्शन का चुनाव जटिल हो जाता है। जो समुदाय में विद्यमान समस्त विविधताओं का प्रतिनिधित्व कर सके।' इसिलिए इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि निदर्शन के चुनाव में विभिन्न इकाइयों में विविधता होने के बावजूद भी निदर्शन प्रतिनिधिपूर्ण होना चाहिए।

**२) प्रतिनिधित्वपूर्ण चयन** - इस पद्धति के अन्तर्गत समग्र में से इकाइयो को इस प्रकार चुना जाता है कि वे सम्पूर्ण का प्रतिनिधित्व करे। इकाइयो का चयन करते वक्त बडी सावधानी बरती जानी चाहिए। एक दो इकाइयो को चुनकर हम प्रतिनिधित्वपूर्ण निष्कर्ष



Scanned with CamScanner

**Journal of Research & Development** Vol. 10 (Special Issue 4) January 2020, (ISSN-2230-9578)
COSMOS IMPACT FACTOR - 4.270

**नहीं निकाल सकते। प्रतिनिधित्व का यह आधार है कि विशेष गुण समूह के आधार पर समस्त समूह को कुछ निश्चित वर्गो में बाँट दिया जाता है और प्रत्येक वर्ग की कुछ इकाइयो को चुनने से समग्र प्रतिनिधित्व सम्भव हो जाता है।**

३) अधिक परिशुद्धता की सम्भावना - निदर्शन में शत-प्रतिशत परिशुद्धता लाना मुश्किल है, फिर भी यही कोशिश होनी चाहिए कि निदर्शन अधिक से अधिक प्रतिनिधिपूर्ण हो। प्रतिनिधिपूर्ण निदर्शन वास्तविक स्थिति का प्रतिबिम्ब होता और उसके निष्कर्ष भी लगभग ठीक होते है। सामाजिक घटनाओ कि विविधताओ के कारण, निदर्शन का चुनाव यदि ठीक कर लिया जाता है तो शुद्धता की सम्भावना काफी रहती है।

- निदर्शन के गुण -

निदर्शन पद्धति दिन प्रतिदिन लोगप्रिय होती जा रही है। चूँकि सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक घटनाओं की जटिलता के कारण, जनगणना पद्धति अनुपयुक्त तथा कष्टदायक है, अंतः इसी पद्धती का उपयोग अधिकतर किया जाता है। फिर इसमें उत्पन्न होने वाली त्रुटीया की सम्भावना कम रहती है, अंतः इसके निष्कर्षों पर निर्भर रहा जा सकता है। यदि सावधानी से चुना जाए तो निदर्शन न केवल पर्याप्त सस्ता ही रहता है, बल्कि ऐसे परिणाम भी देता है जो अधिक सत्य है तथा कभी-कभी तो संगणना के परिणामो से भी सत्य होते है। अतःएवं सावधानीपूर्वक चुना गया निदर्शन वास्तव मे एक त्रुटिपूर्ण रूप से नियोजित तथा क्रियान्वित संगणता से अधिक श्रेष्ठ होता है। इसके प्रमुख गुण निम्नलिखित है

१) समय की बचत - निदर्शन के अन्तर्गत कुछ चयनित इकाइयो का अध्ययन किया जाता है अंतः यह स्वाभाविक है कि संगणना पद्धति में वहां समग्र का अध्ययन करने से बहुत समय व्यर्थ में चला जाता है, वहाँ इस प्रणाली द्वारा वास्तविक समय की बचत होती है। अनुसधानकर्ता के लिए समय बहुत कीमती होता है और यदि वह समय नहीं बचा पाता तो वह अनुसधान के नवीन यंत्रो, साधनो और प्रणालियो से परिचित नहीं हो सकता। इस प्रणाली को अपनाने से अनुसधानकर्ता अपने शेष समय का भी सदुपयोग कर सकता है।

२) धन की बचत - इस पद्धति के अन्तर्गत जब कुछ इकाइयो का ही अध्ययन करना होता है तो उस पर किया गया खर्च भी अधिक नहीं हो सकता। जब इकाइयो की संख्या सीमीत है या छोटी है तो उससे सम्बन्धित खर्च जैसे डाक व्यय, यात्रा व्यय, साक्षात्कार लेने के लिए किया गया व्यय, सम्पूर्ण स्टेशनरी के सामान आदि का व्यय भी कम हो जाएगा। सम्पूर्ण में एक तो मशीनरी इतनी व्यापक होती है कि उस पर साधारण अनुसंधानकर्ता तो खर्च कर ही नहीं सकता। उसे जो व्यय वहन करना पडता है वह कभी-कभी उसकी सीमा से परे की बात हो जाती है, अंतः इस पद्धती को प्रयोग में लाने से पैसे की बचत अधिक ही होती है।

३) परिणामो की परिशुद्धता - इस पद्धती में कुछ इकाइयो को लिया जाता है जो समग्र या समूह का प्रतिनिधित्व करती है अंतः परिणामो में शुद्धता की गुंजाइश अधिक रहती है। परन्तु यह इस बात पर निर्भर करता है कि निदर्शन का चुनाव बडी सतर्कता और होशीयारी से किया जाय। चूँकि ध्यान कुछ ही इकाइयो पर केन्द्रित रहता है, अंतः इस आधार पर उनकी शुद्धता का पता लग सकता है जो कि अनुसन्धान का प्रथम गुण है।

**४) गहन अध्ययन - जनगनना पद्धती मे अनुसंधानकर्ता का ध्यान अनेक इकाइयो पर जाने केवल मोटी-मोटी बातो को पता लग सकता है, अनेक बारिकियो का अध्ययन हो नहीं पाता है। अंतः इस पद्धति द्वारा कुछ इकाइयो का अध्ययन बडी गहराई से किया जा सकता है क्योकि सभी इकाईयो के लिए इतना समय देना और इतने ही एकाग्रचितता से अध्ययन करना सम्भव नही होता।**

**५) प्रबन्ध की सुविधा - निदर्शन के अन्तर्गत कम इकाइयो का अध्ययन करना होता है। अंतः अधिक संख्या में कार्यकत्ताओ को नियुक्त करने की आवश्यकता नहीं रहती और दूसरी बात कुछ ही लोगो से सूचना प्राप्त करनी होती है, अंतः साधन भी आसानी से उपलब्ध हो जाते है। सूचना के मिलने में भी विशेष देरी या असुविधा नहीं रहती। तात्पर्य यह है कि जिन चयनित इकाइयो का अव्ययन किया जाता है, उस सम्बन्ध मे प्रबन्ध इतना जटिल और व्यापक नहीं होता, अंतः सम्पूर्ण सर्वेक्षण आसान और सुविधाजनक होता है।**

**६) लचिलापन - निदर्शनो की संख्या अधिक नहीं होती, अंतः इसमे कभी-कभी संख्या को घटाया या बढाया जा सकता है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि अनुसंधान की प्रकृति कैसी है, समग्र की प्रकृति कैसी है, इन्ही के आधार पर इसमें हेर-फेर या परिवर्तन आसानी से किया जा सकता है। जबकि जनगणनात्मक पद्धति में सम्पूर्ण के अध्ययन करने के कारण, यह सम्भव नहीं है।**

**७) संगणना पद्धति के उपयोग की असम्भावना - कभी ऐसी परिस्थितियाँ भी पैदा हो सकती हैं जिनमें संगणना पद्धती को उपयोग में नहीं लाया जा सकता। जब समग्र विस्तृत, जटिल हो अथवा भौगोलिक दृष्टि से बहुत दूर दूर बिखरा हो, जहाँ पहुँचने तक के साधन उपलब्ध न हो तो ऐसी स्थिति मे संगणना पद्धती के स्थान पर निदर्शन पद्धति ही अधिक उपयुक्त होती है।**



Scanned with CamScanner

- **निदर्शन पद्धति के दोष -**

निदर्शन पद्धति के अनेक लाभ होने के बावजूद भी इसमें कुछ न कुछ दोष अवश्य हैं। इसका प्रयोग सीमाओ के अन्तर्गत ही किया जा सकता है। बिना नियंत्रण के निदर्शन पद्धति उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकती। इसमे निम्नलिखित दोष पाए जाते है -

१) उचित प्रतिनिधित्व की समस्या - इसका सर्व प्रथम दोष है कि प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चयन करना एक बडी समस्या है। इसका कारण यह है कि सामाजिक और राजनीतिक इकाइयो में भिन्नता और विविधता बुहत होती है और जितनी अधिक भिन्नताएं होगी उतना हो प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चुनाव करना कठिन होगा। जब निदर्शन सही प्रतिनिधित्व नहीं कर पाता तो उसके निष्कर्षो की विश्वसनीयता और प्रामाणिकता पर कम विश्वास किया जाता है। इसका प्रतिनिधित्व पूर्ण होना इस बात पर निर्भर है कि कौनसी पद्धती को अपनाया गया है। यदि चुनाव पद्धति में ही गलती हो गई है तो निदर्शन में भी प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं हो सकता।

२) पक्षपात की सम्भावना - इसका अन्य दोष यह है कि निदर्शन चुनाव निष्पक्ष नहीं हो पाता। जब इसके चयन में ही पक्षपात पूर्ण रवैया प्रवेश कर जाता है तो इस पद्धती से आशा नहीं की जा सकती कि इसके परिणाम बिल्कुल सत्य, तटस्थ और पक्षपात रहित होंगे। प्रायः जब किसी विशेष उद्देश्य के लिए निदर्शन का चयन किया जाता है तो अभिनति स्वतः ही आ जाती है और निकाले गए निष्कर्ष भी सामान्यतया अविश्वसीय एवं भ्रांतिपूर्ण हो सकते हैं।

३) आधारभूत व विशेष ज्ञान की आवश्यकता - निदर्शना का चुनाव बहुत ही जटिल काम है। जिन इकाइयो का चयन किया जा रहा है, उनकी प्रकृती का ज्ञान तथा उसकी आधारभूत बातों की जानकारी आवश्यक है। इस कार्य के लिए बडे धैर्य, ज्ञान, सूझ-बूझ तथा अनुभव की आवश्यकता रहती है। इन गुणों का समान रूप से सभी अनुसधानकर्ताओं में पाया जाना कठिन है। इस कार्य के लिए कुछ ऐसे अनुभवशील, योग्य, एवं विशेषज्ञ होते हैं जो इस पद्धति का सफलतापूर्वक उपयोग कर सकते है।

४) निदर्शन पालन की समस्या - इस पद्धति के अन्तर्गत कुछ इकाइयो के आधार पर निष्कर्ष निकालने में असुविधा होती है। यह पद्धति इस बात पर जोर देती है कि जिन इकाइयो को निदर्शन के रूप में चुना गया है, केवल उसी का ही अध्ययन किया जाए। परन्तु व्यवहार में यह हो सकता है कि चुनी हुई इकाइयो से भौगोलिक दूरी, सामाजिक, राजनीतीक स्थिति के कारण सम्पर्क भी स्थापित नही किया जा सके। ऐसी स्थिति में अनुसधानकर्ता उन्हे या तो अपने अध्ययन से ही निकाल देता है या उनके स्थान पर किसी ऐसे को चुन लेता है जो कि हो सकता है प्रतिनिधिपूर्ण ही न हो। कई बार ऐसा होता है कि लोग सूचना देने में आनाकानी करते है अंतः मूल निदर्शन पर कायम रहना मुश्किल है।

**५) अनुसंधान में इसके प्रयुक्त की असम्भावना - सगणना पद्धति की भाँति यह भी कही-कही असम्भव सिद्ध हो जाती है। जहाँ समग्र बहुत छोटा हो, एक जातीयता या एकरूपता का अभाव हो, विरोधाभास हो, वहाँ इसका प्रयोग सम्भव नहीं है। यदि परिणाम प्राप्त करने की कोशिश की भी गई तो अन्तिम निष्कर्ष सत्य प्रमाणित नहीं हो सकते। अंतः ऐसी दशाओ में सगणना पद्धती को ही काम में लाया जाता है।**

- **निष्कर्ष -**

**निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है की निदर्शन पद्धति में कुछ गुण और कुछ दोष दोनों समाहित होते हैं। कुछ दोषों के बावजूद इसके महत्व को कम नहीं किया जा सकता क्योकि इस प्रणाली द्वारा प्राप्त निष्कर्ष पर्याप्त सीमा तक शुद्ध एवंम सत्य होते हैं। इसीलिए अनुसन्धान में निदर्शन पद्धती का स्थान महत्वपूर्ण माना जाता है।**

- **संदर्भ -**

**१. बी.एम. जैन - रिसर्च मेथ्डोलॉजी, रिसर्च पब्लिकेशन्स इन सोशल सायन्स, दिल्ली**
**२. डॉ. सावित्री सिन्हा - अनुसन्धान का स्वरूप, आत्माराम एण्ड सन्स, नई दिल्ली, १९५४**
**३. राम आहुजा - सामाजिक अनुसन्धान, रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली, २०१०**
**४. Goode and Hatt - Methods in Social Research, p. ३२९**
**५. Bogardus - Sampling is the selection of certain percentage of a group of items according to a predetermined plan, p. ५४८**

---------------------------*****---------------------------



Scanned with CamScanner

| | | | |
|---|---|---|---|
| 62 | इंद्रायणी ज्ञानेश्वर सैंदाणे | संशोधन पद्धती : स्वरूप, व्याप्ती व टप्पे | 210-211 |
| 63 | प्रा.डॉ. अनिल विठ्ठल बाविस्कर | ' तथ्य संकलनाची तंत्रे" | 212-215 |
| 64 | प्रा.डॉ. सुधाकर नारायण भालेराव | सामाजिक शास्त्रे, साहित्य संशोधन : तुलनात्मक पध्दती | 216-218 |
| 65 | प्रा.डॉ. मधुकर आ. देसले | "सामाजिक संशोधनातील मुलाखत तंत्राचे फायदे-तोटे एक समाजशास्त्रीय अभ्यास" | 219-221 |
| 66 | प्रा. डॉ. शकुंतला एम. भारंबे | मराठी वाङमयातील संशोधन क्षेत्र | 222-224 |
| 67 | प्रा.डॉ. भामरे नानाजी दगा | इतिहासातील संशोधनाच्या पायऱ्या | 225-229 |
| 68 | प्रा.डॉ. सौ. सुषमा प्रमोद पाटील | "भारतात सामाजिक संशोधनाची आवश्यकता व उपयुक्तता" | 230-232 |
| 69 | प्रा.डॉ. रविंद्र दगडू वाघ<br>प्रकाश एकनाथ वाघ | सामाजिक संशोधनात अहवाल लेखनाचे महत्व | 233-235 |
| 70 | प्रा.डॉ. अरुण उखा पाटील | "सामाजिक संशोधनातील मुलाखत तंत्राचे फायदे तोटे एक समाजशास्त्रीय अभ्यास" | 236-238 |
| 71 | श्रीमती सुलक्षणा किसनराव भरगंडे | संशोधन अहवाल लेखन पध्दती : एक अभ्यास | 239-241 |
| 72 | Mr. Bitu Shivaji Molane<br>Dr. Wangujare S. A. | सोलापूर विद्यापीठातील ॲथलेटिक्स खेळाडूंच्या शारीरिक क्षमतांचा चिकित्सक अभ्यास | 242-244 |
| 73 | प्रा.डॉ. डी.डी. राठोड | "संशोधनाची रूपरेषा आणि गृहितके" | 245-246 |
| 74 | प्रा.डॉ. राजधर चैत्राम बेडसे | संशोधनातील प्रश्नावलीचे फायदे व तोटे | 247-249 |
| 75 | Dr. Jagdish J. Patil | How To Write Research Report ? | 250-251 |
| 76 | Dr. Pramod Bhumbe | Research Methodology in Social Work | 252-253 |
| 77 | Vijay Bajirao Jadhav,<br>Dr. Anil M. Chaudhari | Research Methods in context of LIS | 254-256 |
| 78 | Jadhav S.L. | Writing the Research Report | 257-259 |
| 79 | प्रा. एम.जी. वसावे | अनुसन्धान में निदर्शन पद्धति के गुण एवं दोष | 260-262 |
| 80 | प्रफुल ईश्वरराव ढोके | नमुना निवडीचे तंत्र व प्रकार | 263-268 |
| 81 | प्रा. राधेश्याम शं. ठाकरे | संशोधनाची उद्दिष्टे व महत्त्व | 269-270 |
| 82 | श्री.सुनिल छोटू पवार<br>प्रा.डॉ.संजय जिभाऊ पाटील | पश्चिम खान्देशातील संयुक्त महाराष्ट्र चळवळीत आचार्य प्र.के.अत्रे यांचे प्रबोधन | 271-274 |




Scanned with CamScanner

▪ Impact Factor – 6.625 ▪ Special Issue - 214 (C)
▪ January 2020 ▪ ISSN – 2348-7143

INTERNATIONAL RESEARCH FELLOWS ASSOCIATION'S
# RESEARCH JOURNEY
Multidisciplinary International E-Research Journal
**PEER REFREED AND INDEXED JOURNAL**

# हिंदी साहित्य में चित्रित हाशिए का समाज

- कार्यकारी संपादक -
डॉ. जिजाबराव पाटील

- अतिथि संपादक -
डॉ. बी. एन. पाटील

- मुख्य संपादक -
डॉ. धनराज धनगर

Printed By : PRASHANT PUBLICATIONS, JALGAON

For Details Visit To : www.researchjourney.net

Scanned with CamScanner

- समकालीन दलित लेखकों के आत्मकथाओं में दलित चेतना ........ ११५
  प्रा. डॉ. कमलकिशोर गुप्ता
- समकालीन हिन्दी साहित्य में चित्रित नारी ........ ११७
  डॉ. अश्विनीकुमार नामदेवराव चिंचोलीकर
- हाशिए का जनजातीय समाज एवं हिंदी कथा साहित्य ........ ११९
  डॉ. शीला आहुजा
- समाजव्यवस्था पर प्रहार करनेवाला 'जूठन' ........ १२२
  प्रा. डॉ. न. पु. काळे
- हिंदी साहित्य और हाशिए का समाज किन्नर विमर्श........ १२५
  डॉ. विजय कुमार
- हिंदी उपन्यासों में कृषक विमर्श ........ १२७
  प्रा. डॉ. राख बळीराम
- २१ वी सदी के उपन्यासो में किन्नर विमर्श (सन २०१० के बाद) ........ १२९
  डॉ. विजयकुमार टी. कल्लुरकर
- हिन्दी उपन्यासों में चित्रित – किन्नर समाज ('यमदीप' और 'किन्नर कथा' उपन्यासों के संदर्भ में) ........ १३१
  प्रा. महेंद्र गोरजी वसावे
- मजदूर वर्ग की व्यथा : 'गैंगमैन' आत्मकथा........ १३३
  प्रा. राजेंद्र ज्ञानदेव ननावरे
- यहूदी की लड़की (नाटक) : एक अनुशीलन ........ १३६
  इबरार खान
- परशुराम शुक्ल के काव्य में बाल विमर्श ('मंगल ग्रह जाएँगे' के विशेष संदर्भ में) ........ १३९
  श्री. लिपारे अजित विठ्ठल
- हिन्दी काव्य साहित्य में दलित चेतना : ओमप्रकाश वाल्मीकिजी के 'बस्स! बहुत हो चुका' काव्य संग्रह के परिप्रेक्ष्य में......... १४१
  प्रा. डॉ. कल्पना सतीष कावळे
- चित्रा मुद्गल के कथा–साहित्य में चित्रित नारी विषयक समस्याएँ........ १४४
  प्रतिभा चौधरी, डॉ. राजेश भामरे
- हिंदी नाटकों में दलित चेतना ........ १४७
  प्रा. रामहरि काकडे
- ओमप्रकाश वाल्मीकी के कहानी साहित्य में दलित विमर्श ........ १४९
  प्रा. अनिता भिमराव काकडे
- धरती आबा नाटक में 'आदिवासी नायक बिरसा मुंडा के विचार' ........ १५१
  प्रा. संदीप हंसराज शिंदे
- 'जूठन' : भोगे हुए यथार्थ का प्रमाणिक दस्तावेज ........ १५३
  डॉ. ज्ञानेश्वर गणपतराव रानभरे
- आदिवासी जनजातियों की बोली भाषा तथा सामाजिक जीवन का अध्ययन ........ १५६
  (महाराष्ट्र प्रदेश के कोळी मल्हार, कोळी महादेव, कोळी टोकरे के विशेष संदर्भ में)
  डॉ. दिलीप सुखदेव फोलाने
- आदिवासी विमर्श के संदर्भ में आदिवासी कविता........ १५८
  डॉ. उत्तम राजाराम आळतेकर
- समकालीन आदिवासी जीवन के संघर्ष ........ १६१
  अशोक कुमार सिंह
- आदिवाशी विमर्श में संस्कृति........ १६४
  ज्ञान प्रकाश
- आदिवासी जीवन की साहित्यिक विरासत........ १६७
  डॉ. ललित कुमार सिंह




Scanned with CamScanner

# हिन्दी उपन्यासों में चित्रित – किन्नर समाज
## ('यमदीप' और 'किन्नर कथा' उपन्यासों के संदर्भ में)

**प्रा. महेंद्र गोरजी वसावे**
(हिन्दी विभाग)
कला, वाणिज्य महाविद्यालय, अक्कलकुवा

आधुनिक युग में जीते हुए कई साहित्यकार अपनी कलम के माध्यम से वंचित और दबे हुए वर्ग के लिए सुनहरी राह का निर्माण कर रहे है। आज समाज की सोच नारी, दलित, आदिवासी, कृषक, मजदूर, वृद्ध जो वंचित रहते थे, उनके प्रति बदल रही है, बदली हैं। लेकिन आज भी समाज में एक ऐसा घटक है जो वंचित है और जिसके प्रति समाज की सोच आज भी परम्परागत एवं रूढिगत है और वह समाज है - किन्नर। किन्नर को हिजडा, छक्का, नम्बर नौ, तीसरा लिंग, खोजा और शिखण्डी भी कहा जाता है। विश्व में ऐसा कोई देश नहीं है जहाँ लिंगविहीन तृतीय प्रकृति के लोग रहते हो। लेकिन भारत सबसे बडा लोकतान्त्रिक देश है जहाँ हाशिये के समाज का दायरा अन्य देशों की तुलना में बडा है।

**विद्वानों के मत :**

किन्नरों के संदर्भ में कई विद्वानों ने अपने विचार व्यक्त किए है। रवि कुमार गोण्ड के अनुसार – 'किन्नर' शब्द हिजडे के रूप में प्रयुक्त हो चुका है। यह शब्द उन लोगों के लिए प्रयुक्त होता है . . . जिसका समाज में कोई स्थान नहीं, जो भोग-विलास न कर सके, जो मातृत्व और पिता के सुख से वंचित हो और दोनों के अधिकारिक दायित्व से वंचित हो। ऐसे लोगों को 'हिजडा' शब्द का पर्याय माना जाता है।''[१]

पुनीत बिसारिया लिखते है – ''किन्नर या हिजडों से अभिप्राय उन लोगों से है, जिनके जननांग पूरी तरह विकसित न हो पाए हों अथवा पुरूष होकर भी स्त्रैण स्वभाव के लोग, जिन्हें पुरूषों की जगह स्त्रियों के बीच रहने में सहजता महसूस होती है।''[२]

उर्मिला पोडवाल के अनुसार – ''ऐसे मानव किन्नर कहलाते हैं जो लैंगिक रूप से नर हाते हैं न मादा। आमतौर पर न तो पुरूष और न ही महिला, ये एक तीसरे लिंग के रूप में पहचाने जाते हैं।''[३]

**प्राचीन काल :**

इतिहास में भी इनकी विशेष तरह की उपस्थिति दिखाई देती है। प्राचीन काल में भी इनका जिक्र हुआ है, जैसे – रामायण में राम जी वनवास चले जाने के बाद उन्हें मनाने के लिए अयोध्या नगरी के नर-नारी एवं किन्नर भी चित्रकुट साथ गये थे। महाभारत में 'शिखण्डी' जो पितामह भीष्म के मृत्यु का कारण बनता है। अर्जुन भी अपने अज्ञातवास के काल में 'बृहन्नला' का रूप धारण किया था। कौटिल्य ने भी अपने अर्थशास्त्र नामक ग्रंथ मे किन्नरों को राजसी सेवा के रूप में चित्रित किया है। हिन्दु और मुस्लिम शासकों द्वारा भी रानियों की पहरेदारियों के लिए किन्नरों का उपयोग किया जाता था। राजा महाराजा इनसे सुरक्षाकर्मी तथा जासूसी का काम करवाते थे।

हमारे भारतीय समाज में किन्नरों को लेकर भिन्न-भिन्न तरह की भ्रान्तियाँ हैं। किन्नर परिवार में बोझ समझे जाते है इसलिए उन्हें घर-परिवार से अलग कर दिया जाता है। हिन्दी साहित्य में उपन्यासों को अधिक महत्त्व है। हिन्दी के कई उपन्यासकारों ने अपनी औपन्यासिक कृतियों में किन्नरों की व्यथा का चित्रण किया है। किन्नरों की त्रासदीपूर्ण जीवन की वास्तविकता का चित्रण इन उपन्यासों में हुआ है। कुछ उपन्यासों के माध्यम से किन्नर जीवन को समझने का प्रयास करते है –

**यमदीप (२००२) :**

'यमदीप' लेखिका नीरजा माधव कृत लिखीत उपन्यास है। इसका प्रकाशन २००२ में हुआ है। यह उपन्यास किन्नरों के जीवन पर आधारित संभवत: पहला हिन्दी उपन्यास है।

किन्नरों को ना कोई परिवार होता है ना कोई बच्चे। लेकिन फिर भी कई बार इनके मातृत्व एवं दातृत्व की झलक देखने को मिलती है। प्रस्तुत उपन्यास में गली में एक पागल स्त्री प्रसव वेदना से तडप रही होती है और गली के कुछ मनचले लडके तथा औरते भी तमाशबीन बन देख रही होती है, उस समय नाजबीबी (किन्नर) उस पागल औरत की मदद करती है, तथा उस बच्ची को पालती भी है। लेकिन इस समय वो मानव समाज पर एक करारा तमाचा मारते हुए कहती है, ''अब कोई पूछनहार नहीं इसका, तो क्या हम भी छोड जायेंगे ? अरे हम हिजडे हैं, हिजडे. . . इनसान हैं क्या जो मुँह फेर लें ?।''[४]

प्रस्तुत उपन्यास में किन्नरों की रोजगार की समस्या को उठाया गया है। सरकार ना तो इन्हें समाज में जगह दिला पायी है और न ही रोजगार के अवसर। किन्नर अपनी जीविका चलाये तो चलाये कैसे। चमेली (किन्नर) भगवान को दोष देते हुए कहती है – ''तन तो भगवान ने आधा टुकडा बनाया कि किसी लायक नहीं रहे और पेट . . . ? पेट तो नहीं न बन्द करके भेजा। वह तो खुला ही है। रोज भरो, रोज खाली। उसे भी काटकर या सीकर भेजता तो कम-से-कम बस जीना ही तो रहता।''[५]

**किन्नर कथा (२००९) :**

'किन्नर कथा' महेन्द्र भीष्म कृत लिखीत उपन्यास है। किन्नरों के जीवन पर आधारित सबसे महत्त्वपूर्ण उपन्यास माना जाता है। प्रस्तुत उपन्यास में राजघराणे में एक हिजडा (नवजात शिशु) जन्म लेता है। एक माँ अपने आने वाले बच्चे के प्रति कितनी अगाध स्नेह से भरी होती है, वह जिस बच्चे ने अब तक इस दुनिया को ढंग से देखा भी नहीं है, उससे दूर हो जाती है।

राजा बच्चे के संदर्भ में कहता है, ''भगवान ने हमाए इते हिजडा बच्चा को जन्म कराओ . . . हिजडा बच्चा . . . का आ . .



Scanned with CamScanner

. के रये. . . दायजू सरकार ऐसी अनहोनी?''[६] समाज की मानसिकता का चित्रण भी इस उपन्यास में देखने को मिलता है, जब राजा का दीवान पंचम सिंह कहता है, ''हओ, दद्दा, वीर बुन्देला खानदान की बरसन की इज्जत धूरा में मिल जे है . . . अगर जा बात लोगन में फैल गयी, तो।''[७] समाज की झूठी आन-बान और शान के खातीर बच्चे का कुछ दोष ना होते हुए भी उसकी हत्या करवा दी जाती है।

प्रस्तुत उपन्यास में किन्नरों के समाज में किस दृष्टि से देखा जाता है इसका भी वर्णन किया गया है, जिससे किन्नरों की व्यथा का पता चलता है। ''इनसे हमारे सम्बन्ध केवल खुशी के हैं, नाच-गाकर बख्शीश् न्यौछावर लेने के। बस्स, इससे ज्यादा नहीं। कोई भी हमारा साथ नहीं चाहता, हँसी-ठिठोली के अलावा . . . आज तक किसी ने अपने घर में हम हिजडों को दाखिल किया है ? अपने बैठक में बिठाकर चाय-पानी को पूछा है? बाजार-हाट में साथ-साथ चला है? नहीं न ? इनसे मेल-जोल केवल वहीं तक जहाँ तक इनकी खुशी, शादी, ब्याह, बच्चों का जन्म हो या मुण्डन, हमीं बिन बुलाये बेशर्म से तालियाँ पीटते पहुँच जाते हैं, बिन बुलाये मेहमान की तरह हमें हिकारत से देखते हैं। कोई नहीं चाहता हमारा साथ, दूर भागते हैं हमारी छाया से, जैसे हम इनसान न हो, कोई अजूबा हों। अछूत की तरह व्यवहार किया जाता है।''[८]

किन्नर समाज की दुनिया बडी ही कारूणिक और रहस्यात्मक है। वे संसार का सारा दु:ख अपने भीतर समेटकर दूसरों के खुशियाँ और दुआएँ बाँटते हैं। नारी, दलित, मुस्लिम, वृद्ध इनके लिए अपना घर-परिवार है, लेकिन किन्नरों को अपने घर-परिवार और समाज से भी विस्थापित कर हाशिये पर धकेल दिया जाता है। किन्नरों के पास अपना कहा जाने वाला ऐसा कुछ भी नहीं है।

महेन्द्र भीष्म ने सोना नामक पात्र द्वारा किन्नर जीवन की त्रासदी का जीवंत चित्रण किया है। सोना एक राज परिवार में जन्मा बच्चा है किंतु वह जन्म से ही न नारी है न नर। इसलिए उसे राजभवन से दूर भेज दिया जाता है। उसका नाम सोना रखा जाता है। उसके घर में उसकी बहन की शादी है, लेकिन उसे राजभवन से दूर पाठशाला में ठहराया जाता है। सोना सोचती है कि उसका क्या दोष है ? क्यों वह राजसी ठाठ-बाट, सुख-सुविधाएँ और वैभव को भोग नहीं सकती ? क्या किन्नर होना अभिशाप है ? क्या जन्म लेना उसके हाथों में था ? वह सोचती है, ''ईश्वर ने उसके साथ कितना बडा अन्याय किया था? काश, उसे पूरी तरह से पुरूष बनाया होता तो आज वह कुँवर की तरह शान से अपनी बहन की शादी में व्यवस्था देखता और यदि पूर्ण स्त्री बनाया होता तो बहन की तरह वह भी राजकुँवरि की तरह रहती, कोई उसे भी दूर देश से ब्याहने आता। वह दुल्हन के जोडे में सजती-सँवरती, गढी में आज की तरह उसके लिए मंगल गीत गाये जाते, शहनाइयाँ बजतीं, पर ईश्वर ने उसे हिजडें के रूप में पैदा कर कहीं का नहीं रखा।''[९]

समाज के डर से किन्नर का खुद का परिवार उससे घृणा करता है। समाज की कडवाहट और घृणा बर्दाश्त होती है पर अपनों की घृणा ? क्या स्वाभिमान सन्तान से अधिक प्यारा होता है ? क्या स्वाभिमान के लिए अपने ही बच्चे की हत्या करवाना ठीक है ? हमारा भारतीय समाज किन्नरों के परिवार को एक अभिशप्त एवं विस्थापित जीवन जीने के लिए मजबूर कर देता है।

अपने परिवार से बिछडने का दर्द क्या होता है ? कविता के माध्यम से किन्नर के दर्द और व्यथा का यथार्थ चित्रण हुआ है -

*''न नर हूँ, न नारी हूँ, न ही माँ किसी की और न बाप हूँ*
*हूँ ईश्वर की एक विकृत रचना या खुद के लिए ही श्राप हूँ*
*न आगमन हुआ मेरा अम्बर से, न उपजी मैं धरा से*
*कोई तो होगा पिता ? मेरा भी जन्म हुआ होगा किसी माँ से।''*[१०]

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि, 'यमदीप' और 'किन्नर कथा' इन उपन्यासों में किन्नर की मानवीय संवेदना का यथार्थपूर्ण चित्रण किया हुआ मिलता है। सभ्य समाज में किन्नर समाज को बहिष्कृत और तिरस्कृत नजरों से देखा जाता है। घर में हिजडे का जन्म लेना अपनी आन-बान-शान के खिलाफ समजा जाता है। उस बच्चे को फेंक दिया जाता है, नहीं तो उसकी हत्या कर दी जाती है। उपन्यासकारों ने किन्नरों की आन्तरिक पीडा और संवेदना का कुशल चित्रण किया है।

**संदर्भ सूची :**

१. संपादक डॉ. विजेन्द्र प्रताप सिंह / रवि कुमार गोंड, भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श - अमन प्रकाशन, कानपुर - २०१६ - पृ. क्र. १००
२. संपादक अरविन्द कुमार, निरूपह (त्रैमासिक पत्रिका), सितम्बर-फरवरी २०१६- पृ.क्र.१३
३. संपादक डॉ. विजेन्द्र प्रताप सिंह / रवि कुमार गोंड, भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श - अमन प्रकाशन, कानपुर - २०१६ - पृ. क्र. १५८
४. नीरजा माधव, यमदीप, सुनील साहित्य प्रकाशन, नयी दिल्ली - २००२ - पृ.क्र. १२
५. वही पृ. क्र. २७
६. महेन्द्र भीष्म, किन्नर कथा, सामायिक बुक्स, नई दिल्ली - २००९ - पृ. क्र. २६
७. वही पृ. २६
८. वही पृ. ७६
९. वही पृ. १६५



Scanned with CamScanner

Impact Factor – 6.625 | Special Issue – 232 | February 2020 | ISSN – 2348-7143

INTERNATIONAL RESEARCH FELLOWS ASSOCIATION'S

# RESEARCH JOURNEY

**Multidisciplinary International E-Research Journal**

**PEER REVIEWED, INDEXED AND REFEREED JOURNAL**

# २१ वीं शताब्दी का हिंदी उपन्यास साहित्य

अतिथि संपादक
**प्राचार्य डॉ. ए. एस. पैठणे**

मुख्य संपादक
**डॉ. धनराज टी. धनगर**

कार्यकारी संपादक
**डॉ. महेश गांगुर्डे**

कार्यकारी सह-संपादक
**प्रा:. महेंद्र वसावे**

For Details Visit To :
www.researchjourney.net

**Printed By : PRASHANT PUBLICATIONS, JALGAON**

Scanned with CamScanner

# अलका सरावगी के उपन्यासों में नारी चेतना (कलि-कथा : वाया बाइपास के विशेष संदर्भ में)

**प्रा. महेंद्र गोरजी वसावे**
हिन्दी विभाग,
कला, वाणिज्य महाविदयालय, अक्कलकुवा

हिंदी साहित्य में इक्कीसवीं सदी में बदलाव की धारा निरंतर प्रवाहमान रही है। इक्कीसवीं सदी में कई विमर्शों को लेकर साहित्यकारों ने लेखन किया तथा उन विमर्शों को लेकर कई संगोष्ठियाँ हुई। इक्कीसवीं सदी का उपन्यास साहित्य हिंदी साहित्य में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। कई जाने-माने तथा नये उपन्यासकारों ने यथार्थवादी उपन्यासों के माध्यम से पाठकों को रू-ब-रू कराने का प्रयास किया। इन साहित्यकारों के उपन्यसों का प्रतिफल है कि कई नए विमर्शो का दौर चल पडा जिसमें, किन्नर विमर्श, मुस्लिम विमर्श, बाल विमर्श, वृद्ध विमर्श आदि।

हिंदी साहित्य में कई साहित्यकार ऐसे हे जिनकी कलाकृतियाँ ही उनकी पहचान है। हिंदी साहित्य में लेखकों के साथ-साथ कई लेखिकाओं का भी अमूल्य योगदान रहा है। हिंदी साहित्य में हिंदी लेखिकाओं ने अपनी कलम के माध्यम से एक नई धारा प्रवाहीत करने का काम किया है। ऐसी कई महिला लेखिकाएँ है लेकिन इन सबमें एक नाम जो उनकी कलाकृतियों के कारण पहचाना जाता है वह है - अलका सरावगी। अलका सरावगी उपन्यास साहित्य की बहुचर्चित और सम्मानित हस्ताक्षर हैं।

अलका सरावगी का जन्म १७ नवंबर १९६० को कलकत्ता, पश्चिम बंगाल (भारत) में हुआ था। अलका सरावगी ने आज तक कई उपन्यास लिखे है। अलका सरावगी के पहले ही उपन्यास 'कलि-कथा : वाया बाइपास' ने उन्हें हिंदी साहित्य जगत के शीर्ष साहित्यकारों के सम्मुख ला खडा कर दिया। उन्हें उनके साहित्य सेवा के कारण श्रीकांत वर्मा पुरस्कार (१९९८), साहित्य अकादमी पुरस्कार (२००१) और बिहारी पुरस्कार (२००६) प्राप्त हो चुके है।

अलका सरावगी का 'कलि-कथा : वाया बाइपास' इस उपन्यास के माध्यम से उन्होंने नारी जीवन के विविध पहलूओं को बारिकीयों के साथ चित्रित किया है। नारी के जीवन में कई उतार-चढाव आते है वह उन सभी उतार-चढावों को सामना करते हुए अपना जीवनयापन करती है। नारी साहस और धैर्य की प्रतिमूर्ति होती है, वह कभी भी आनेवाली समस्याओं से विचलित नहीं होती। लेकिन प्रस्तुत उपन्यास की किशोर की पत्नी, भाभी तथा माँ तक छोटे से छोटे निर्णय तक पुरूष सत्ता के बिना नहीं ले सकती इसका चित्रण अलका सरावगी ने किया हुआ है। अलका सरावगी का उक्त उपन्यास में यह जो कथन है वह नारी के साहस और धैर्य को प्रमाणित करता है, ''माँ की आँखें तरलता को आने से पहले ही सोख लेती हैं। वह अपने शब्दों को मजबूती से सहारा देकर खडा करती है।''[१] प्रस्तुत उपन्यास की जो माँ है वह हर दर्द, पीडा और तकलीफ को चुपचाप सहती है, कुछ कह नहीं सकती। इस बात को भी सरावगी ने लिखा है, ''माँ को दादी के ऐसे कहने से बहुत तकलीफ होती है, पर वे कुछ कर नहीं पाती थी। वे न पिताजी को ऐसा करने से रोक सकती थीं और न दादी को ऐसा कहने से।''[२] उपर्युक्त कथनों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि नारी अपना जीवन दूसरों के लिए जिती है। वह हर तकलीफ को चुपचाप सहन करती रहती है।

नारी के कारण ही संस्कृति की पहचान है। नारी परंपरा और मर्यादा बनाये रखने के नाम पर अपने आप को सुरक्षित रखती है, वह उस पायदान पर खडा ही नहीं होना चाहती जहाँ से समाज उस पर उँगली उठाये। प्रस्तुत उपन्यास के किशोर बाबू कि पत्नी उनसे पूछे बिना कोई काम नहीं करती थी। ''किशोर बाबू की पत्नी ने आज तक पति से बिना पूछे जीवन में कोई कदम नहीं उठाया था।''[३] नारी का जीवन ऐसा ही है। वह मानती है कि अगर वह अपने पती से बिना पूछे कोई कार्य करेगी तो समाज उससे पूछेगा और उसे समाज के कई प्रश्नों के उत्तर देने होंगे। इसलिए वह कई निर्णयों पर अपने पति के निर्णय पर निर्भर करती है। यही नहीं वह अपने पति से पहले मरना चाहती है और वह मरती भी है। लेकिन शायद कई इच्छाओं को मन में लेकर मरती है। ''वह सुहागन मरी-नथ, चूनडी, सिंदूर, चूडियाँ पहनकर। उसको सबसे बडा भय था कि वह अगर विधवा हो गई तो उसकी नए-नए असली चाँदी-सोने के तार की जरी कलावत और गोटे की ओढनियाँ रखी रह जाएँगी, जिन्हें ओढे बिना वह उसके बहुत समझाने पर भी घर के बाहर नहीं निकलती थी। वह कभी कलकत्ते नहीं आई। उसने उसे कलकत्ते ले चलने के लिए एक बार कहा तक नहीं। उसकी छोटी-छोटी बहुत मामूली इच्छाएँ थी।''[४]

स्त्री के संपूर्ण जीवन की डोर पुरूष सत्ता के हाथ में होती है। उसे छोटे से छोटे निर्णय भी अपने घर के किसी पुरूष से पूछकर लेने पडते है। स्त्री पिता, भाई, पति, देवर, ससूर, बेटा आदि द्वारा निर्णय लेने के मजबूर होती है। किशोर बाबू की पत्नी ने ही नहीं बल्कि उनकी भाभी ने भी कभी अपने निर्णय स्वयं नहीं लिए है। उसके कपडों के लिए भी वह किशोर बाबू के अनुमति का इंतजार करती है। एक बार जब वह किशोर बाबू के अनुमति के बिना लालफाड की साडी पहन लेती है तो उसे किशोर बाबू के भयंकर गुस्से का सामना करना पडता है। किशोर बाबू अपनी भाभी को बहुत लताडते है, ''भाभी को देखकर उनका चेहरा पहले काला हुआ और फिर लाल - तुम्हार दिमाग क्या अब एकदम ही खराब हो गया है भाभी ? उम्र बढने के साथ-साथ आदमी की अक्ल बढती है। पर मुझे लगता है उत्तर



Scanned with CamScanner

प्रदेश (यू.पी.) वालों की अक्ल कम होने लगती है। यह क्या इतन चटक-मटक रंग की साडी पहनी है। क्या कहेंगे लोग देखकर। कुछ तो मर्यादा रखी होती समाज में।''[५] किशोर बाबू द्वारा कहा गया यह मर्यादा शब्द ने न जाने कितने अरसों से नारियों को पंरपरा के बंधन में बाँधकर रखा है। मर्यादा के कारण ही सीता जी को तक वनवास जाना पडा था। इस मर्यादा के डर से नारियों ने आज तक अपने आप को बाँधे रखा है। किशोर बाबू की बात सुनकर भाभी गुस्सा नहीं होती और सहनशीलता की प्रतिमूर्ति बन जाती है। ''भाभी ने साडी बदल ली और अपने अंदर उमडते आँसुओं के लावे को दबाकर किशोर बाबू की पहली सांस्कृतिक पहल को पिटते हुए देखती रही।''[६]

असल में देखा जाये तो भारतीय प्राचीन सभ्यता और उसमें आये परिवर्तनों के साथ नारी की बदलती जीवनशैली को देखा जा सकता है। प्राचीन ग्रंथों में हमें कई जगहों पर नारी के स्वयं निर्णय लेने के प्रमाण मिलते है। तो कई जगहों पर राणियों के राज करने के प्रमाण मिलते है। लेकिन जैसे-जैसे नारी के प्रति समाज का दृष्टिकोन संकुचित होता गया वैसे-वैसे नारियों की दशा में भी परिवर्तन आने लगा। आज उनकी जो सोच है वह उनकी जीवनशैली का ही परिणाम है। नारी को हमेशा प्रथा, परंपरा, रीति-रिवाज, संस्कार और मर्यादा के नाम पर पिछे हटना पडता है। स्त्री के जीवन में कई दु:ख और कष्ट होने के बावजूद भी वह जीवन जीने के लिए मजबूर है। अपने संपूर्ण जीवन में नारी स्वयं दु:ख और कष्ट अपने दामन में समेटती हुई दूसरों के लिए हमेशा खुशियों का गुलिस्ताँ तैयार करती हैं। नारी स्वयं की सारी खुशियाँ अपने परिवार पर लुटा देती है। दूसरों की खुशी देखकर ही वह स्वयं खुश होती है। नारी की महिमा अगाध है और इसी महिमामंडन के कारण आधुनिक नारी भी उन्हीं मर्यादाओं में रहना पसंद करती है। पर नारी का जीवन अगर बदलना है तो महिमामंडन से अधिक महिमाखंडन की और सत्य लिखने की आवश्यकता है।

इस उपन्यास में तीसरी नारी पात्र है किशोर की माँ। किशोर की माँ भी अपने निर्णय कभी स्वयं नहीं लेती। ''माँ कभी किसी से कुछ माँगती नहीं। कभी अपनी गरीबी प्रकट नहीं होने देती। बडे चाचाजी अगर मिलने आ जाएँ, तो झट से पैसे देकर नीचे से बढिया से बढिया मिठाई-कचौडी मँगवाती है, उनके लिए - जैसे अलमारी में ऐसे कितने ही पैसे दबे पडे हों। उन्हें खिलाकर इतना खुश होती जैसे न जाने क्या मिल गया हो। उन पैसों के खर्च होने का लेशमात्र भी दु:ख उसे नहीं होता है।''[७]

अलका सरावगी इस उपन्यास में नारियों की दो पीढियों का अंतर भी स्पष्ट करने में सफल हुई है। लेकिन पुरानी पीढी को अपने जैसे देखना चाहती है, अपने निर्णय थोपना चाहती है, उन्हें लगता है जैसे वह स्वयं निर्णय नहीं ले पाती तो लडकियाँ क्या निर्णय लेगी? लेकिन प्रस्तुत उपन्यास में अलका सरावगी ने इसी पांरपारिक सोच का खंडन किया है, युगों से चली आ रही मानसिकता को परिवर्तित कर एक नया जीवन समाज में स्थापित किया है। आज की स्त्री को सब कुछ सहज ही प्राप्त हो रहा है। आज अगर उसके साथ प्रताडना होती है तो वह कानून का सहारा तक लेती है, या उस पर हो रहे अन्याय-अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाने की हिम्मत करती है। इसका एक छोटा-सा उदाहरण इस उपन्यास में देखने को मिलता है। किशोर बाबू की पत्नी अपनी तीन साल की नातिन को जब कुछ कहती है तो वह कहती है कि 'मेरी मर्जी' इस 'मेरी मर्जी' की उद्घोषणा सुन किशोर बाबू की पत्नी हतप्रभ रह जाती है। उसे बडा ही आश्चर्य होता है कि इतनी छोटी बच्ची को 'मर्जी' का अर्थ पता है और वह एक है आज भी अपने निर्णय अपनी मर्जी किसी पर थोप नहीं पाती। उपन्यास में माँ, पत्नी और भाभी की एक पीढी और दूसरी किशोर बाबू की पत्नी की नातिन की एक पीढी का अंतर दर्शाया गया है।

अलका सरावगी के साहित्य के संदर्भ में कहा जाये तो, ''अलका जी उपन्यासों के माध्यम से परंपरागत मान्यताओं और रूढिगत संस्कारों की असली परख और पहचान करती हैं। बेडियों में जकडे समाज को स्वतंत्र करके नए मूल्यों की प्रतिष्ठा करने की पक्षधर और खुले मन की लेखिका हैं। खुले मन क़ी लेखिका होने के नाते वैचारिकी के स्तर पर तमाम ज्वलंत मुद्दों को चुनौती देती हैं तथा आज के स्त्री-विमर्श को एक नया आयाम देती हैं।''[९]

निष्कर्षत: हम कह सकते है कि, अलका सरावगी ने किशोर बाबू के माध्यम से समाज में किस तरह पुरूष सत्ता का नियंत्रण है इसको दर्शाने का प्रयास किया है। माँ, पत्नी और भाभी तीन नारियाँ यह समाज की उन नारियों का प्रतिक है जो स्वयं निर्णय पुरूष के सहारे लेती है। कितना भी अपमान, अन्याय हो सहनशीलता और धैर्य की प्रतिमूर्ति बन जाती है। लेकिन इस उपन्यास की आधुनिकता से भरी हुई पात्र है किशोरी बाबू की पत्नी की नातिन जो 'मेरी मर्जी' के माध्यम से इस पुरूष सत्ता को ठुकराने का साहस करती है, यही इस उपन्यास की सार्थकता है।

**संदर्भ ग्रंथ :**

१. कलि-कथा : वाया बाइपास, अलका सरावगी, आधार प्रकाशन, पंचकूला (हरियाणा) ज़ २००९, पृ. क्र. ६०
२. वही पृ. क्र. ६१
३. वही पृ. क्र. ६४
४. वही पृ. क्र. ७६
५. वही पृ. क्र. ७८
६. वही पृ. क्र. १५८
७. वही पृ. क्र. १६०
८. वही पृ. क्र. १६७
९. बदलते परिदृश्य में नई सहस्त्राब्दी का भारत, डॉ. वीरेन्द्रसिंह यादव, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली-२०१०, पृ.क्र. ३३१.



Scanned with CamScanner

- अलका सरावगी के उपन्यासों में नारी चेतना (कलि–कथा : वाया बाइपास के विशेष संदर्भ में) ........ ४७
  प्रा. महेंद्र गोरजी वसावे
- किन्नर जीवन का जीवंत दस्तावेज : तीसरी ताली ........ ४९
  श्री. अनिल बाबुलाल सूर्यवंशी, डॉ. जिजाबराव विश्वासराव पाटील
- एक त्रासादानुभव – समाज का ........ ५२
  प्रा. अविनाश बी. अहिरे
- कुसुम अंसल के उपन्यास में मूल्यविहिनता : 'एक और पंचवटी' के विशेष संदर्भ में ........ ५३
  प्रा. डॉ. अनंत भालचंद्र पाटील
- मधु कांकरिया के कथा साहित्य में वैश्वीकरण ........ ५५
  डॉ. संतोष मोटवानी
- बियोंड द जंगल ........ ५७
  प्रा. डॉ. जयश्री गावित
- इक्कीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में राजनीति ........ ५९
  डॉ. करुणा दत्तात्रय अहिरे
- "बाबल तेरा देश में' उपन्यास में नारी विमर्श" ........ ६१
  प्रा. डॉ. आशा डी. कांबळे
- ममता कालिया के "दौड़" उपन्यास का विवेचनात्मक अध्ययन ........ ६३
  प्रा. डॉ. वनिता त्र्यंबक पवार-निकम
- छप्पर उपन्यास में दलित विमर्श ........ ६६
  प्रा. डॉ. अशोक दौलत तायडे
- सूर्यबाला द्वारा रचित 'अग्निपंख' उपन्यास में अभिव्यक्त विविध समस्याएँ ........ ६८
  डॉ. बालकवि लक्ष्मण सुरंजे
- २१ वीं शताब्दी के यथार्थवादी उपन्यासकार डॉ. राजेंद्र मिश्र ........ ७०
  दिनानाथ मुरलीधर पाटील, डॉ. संजयकुमार शर्मा
- "२१ वीं शताब्दी का हिंदी उपन्यास साहित्य" ........ ७२
  डॉ. जाधव अर्जुन रतन,
- 'आख़िरी कलाम' में निहित समकालीनता ........ ७४
  डॉ. मिर्झा अनिसबेग रज्जाकबेग
- किसान जीवन की त्रासदी – 'आखिरी छलांग' ........ ७६
  प्रा. दिलीप पी. पाटील
- "इक्कीसवीं सदी के हिन्दी उपन्यासो में आदिवासी विमर्श – भगवानदास मोरवाल कृत 'रेत' के संदर्भ में" ........ ७८
  प्रा. डॉ. देवकीनंदन महाजन
- इक्कीसवीं शताब्दी के हिंदी आदिवासी उपन्यास ........ ८०
  डॉ. राजेंद्र बाविस्कर
- गोविन्द मिश्र के उपन्यासों में अंकित आर्थिक बोध ........ ८३
  प्रा. डॉ. जगदीश चव्हाण
- सूरज फिर उगेगा में चित्रित आदर्शोन्मुख यथार्थवाद ........ ८६
  प्रा. डॉ. कृष्णा प्रल्हाद पाटील




Scanned with CamScanner